[2021] 4 एस. सी. आर. 996

एच. एस. गौतम

बनाम

राम मूर्ति और अन्य आदि

(सिविल अपील संख्या 1844/2010)

12 फरवरी, 2021

[अशोक भूषण, आर. सुभाष रेड्डी एवं एम. आर. शाह, न्यायमूर्तिगण]

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908–आदेश XXI, नियम 92 सपठित नियम 94 , आदेश XLI, नियम 27–29 –प्रतिवादी (गिरवी रखने वाले) ऋण चुकाने में विफल रहे राशि, अपीलार्थी के पिता–मूल वादी ने मुकदमा दायर किया–सहमति डिक्री पारित–वादी ने निष्पादन याचिका दायर की–निर्णय देनदार प्रतिवादियों ने उसमें आपत्तियां दायर कीं कि डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी–निष्पादन अदालत द्वारा आदेश दिनांक 03.03.98 द्वारा खारिज कर दिया गया – अदालत की नीलामी में बेची गई बंधक संपत्ति–उच्च न्यायालय ने निर्णय देनदारों द्वारा अपील और संशोधन में प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश से एक रिपोर्ट मांगी कि क्या डिक्री प्राप्त की गई थी धोखाधड़ी द्वारा–उस पर भरोसा करते हुए और यह मानते हुए कि डिक्री धोखाधड़ी द्वारा प्राप्त की गई थी और इस प्रकार इसे दरकिनार करते हुए, अपील और संशोधन को विवादित सामान्य निर्णय द्वारा अनुमति दी गई थी मूल वादी और नीलामी खरीदार ने अभिनिर्धारित कियाः फैसले के देनदारों की ओर से पूरी तरह से देरी और लापरवाही हुई उचित स्तर पर उचित कार्यवाही शुरू न करना आदेश डी.टी.डी. 03.03.98 वर्ष 2000 तक निर्णय देनदारों द्वारा चुनौती नहीं दी गई थी–तब तक गिरवी रखी गई संपत्ति पहले से ही थी निष्पादन कार्यवाही में बेचा गया और नीलामी खरीदार के पक्ष में बिक्री की पुष्टि की गई, यहां तक कि बिक्री प्रमाण पत्र भी जारी किया गया और इस प्रकार बिक्री आदेश XXI के संदर्भ में अंतिम हो गई। नियम 92 सपठित नियम 94 – इसके अलावा, इन कथनों को छोड़कर कि डिक्री धोखाधड़ी, गलत निरूपण द्वारा प्राप्त की गई थी, निर्णय देनदारों ने इसके समर्थन में कोई सबूत नहीं दिया–केवल यह आरोप कि धोखाधड़ी हुई थी, नहीं पर्याप्त–इसके अलावा, प्रक्रिया अंतर्गत आदेश XLI, नियम 27–29 का पालन उच्च न्यायालय ने प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश से रिपोर्ट मांगते समय नहीं किया उच्च न्यायालय ने रिपोर्ट पर भरोसा करने और यह अभिनिर्धारित करने में गलती की कि डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी–आक्षेपित सामान्य निर्णय अपास्त किया जाता है–धोखाधड़ी।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908:

अभिनिर्धारित किया गयाः जब तक और प्रक्रिया अंतर्गत आदेश XLI, नियम 27–29 तक नहीं।

आदेश XLI, नियम 27–29 अपील के पक्षकारों को अतिरिक्त साक्ष्य देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

आदेश XXI, नियम 89–92 , 94– अदालत को दरकिनार करने के लिए दायर याचिका वस्तु बंधक संपत्ति की नीलामी/बिक्री–आयोजितः यह निर्णय देनदारियों का मामला नहीं है कि बिक्री के प्रकाशन या संचालन में कोई भौतिक अनियमितता या धोखाधड़ी हुई थी–उनकी आपत्ति यह है कि डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी–आवेदन यू/आदेश XXI, 90 को निष्पादन न्यायालय द्वारा सही ढंग से खारिज कर दिया गया था।

धोखाधड़ी–दलीलें–अभिनिर्धारित: जब धोखाधड़ी का आरोप लगाया जाता है, तो वही प्रमुख साक्ष्य द्वारा अभिवचन और स्थापित किए जाने की आवश्यकता है।

केवल यह आरोप कि धोखाधड़ी हुई, पर्याप्त नहीं है।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 – एस. 96, आदेश XXIII, नियम 3, आदेश XLIII,

आर. 1 (एम), आर. 1ए (2)–सहमति डिक्री के खिलाफ अपील–की रखरखाव–आयोजितः एस के अनुसार। 96 (3) , पक्षों की सहमति से पारित डिक्री के खिलाफ अपील पर रोक लगा दी जाएगी–हालांकि, आदेश XXIII के अनुसार, आर. 3ए इस आधार पर डिक्री को दरकिनार करने के लिए कोई मुकदमा नहीं होगा कि जिस समझौते पर डिक्री आधारित है वह वैध नहीं था–हालाँकि, जब आदेश XLIII, r. 1 (m) को 1976 के अधिनियम 104 द्वारा एक साथ हटा दिया गया, आदेश XLIII, r. 1A उसी द्वारा डाला गया अधिनियम, जिसमें यह प्रावधान है कि समझौता दर्ज करने या समझौता दर्ज करने से इनकार करने के लिए मुकदमे में पारित डिक्री के खिलाफ अपील में, अपीलार्थी इस आधार पर डिक्री का विरोध करने के लिए खुला होगा कि समझौता दर्ज किया जाना चाहिए था या नहीं किया जाना चाहिए था।

अपीलों को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1.1 सरल बंधक विलेख का निष्पादन,वचन पत्र का निष्पादन और ऋण की राशि लेना, निर्णय देनदारों द्वारा विवादित नहीं किया गया है। पूरे समय उचित कार्यवाही शुरू नहीं करने में निर्णय देनदारों की ओर से देरी और लापरवाही हुई।

उपयुक्त चरण 03.03.1998 दिनांकित आदेश निर्णय देनदारियों द्वारा इस प्रभाव के लिए प्रस्तुत आपत्तियां कि निर्णय धोखाधड़ी और गलत प्रतिनिधित्व द्वारा प्राप्त किया गया था, निर्णय देनदारों द्वारा तब तक चुनौती नहीं दी गई थी जब तक कि गिरवी रखा गया था। संपत्ति की नीलामी की गई थी; नीलामी खरीदार के पक्ष में गिरवी रखी गई संपत्ति की बिक्री की पुष्टि की गई थी और यहां तक कि बिक्री नीलामी खरीदार के पक्ष में प्रमाण पत्र जारी किया गया और बिक्री उप–पंजीयक के पास पंजीकृत की गई और यहां तक कि 1999 की आई. ए. संख्या 3 और 1999 की आई. ए. संख्या 4 को भी खारिज कर दिया गया। इतना ही नहीं, उस समय तक उच्च मंच के समक्ष किसी भी अपील पर हमला/चुनौती नहीं दी गई थी। पहली अपील वर्ष 2000 में दायर की गई थी और उस समय तक गिरवी रखी गई संपत्ति को निष्पादन में पहले ही बेच दिया गया था नीलामी खरीदार के पक्ष में कार्यवाही और बिक्री की पुष्टि की गई और यहां तक कि नीलामी खरीदार के पक्ष में बिक्री प्रमाण पत्र भी जारी किया गया। सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रासंगिक प्रावधानों के अनुसार, विशेष रूप से, आदेश XXI नियम 92 जिसे आदेश XXI नियम 94 के साथ पढ़ा जाता है, एक बार जब बिक्री की पुष्टि

हो जाती है और खरीददार के पक्ष में बिक्री प्रमाण पत्र जारी किया जाता है, तो यह अंतिम हो जाएगा। [पैरा 8.1,9] [1013–डी–एच]

1.2 उस समय जब उच्च न्यायालय ने प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश से रिपोर्ट मांगने का आदेश पारित किया था कि क्या डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी या नहीं, निष्पादन न्यायालय द्वारा दिनांक 03.03.1998 पहले से ही एक आदेश पारित किया गया था जिसमें निर्णय देनदारों द्वारा उठाई गई आपत्तियों को खारिज कर दिया गया था कि डिक्री धोखाधड़ी और गलत प्रतिनिधित्व द्वारा प्राप्त की गई थी। निर्णय देनदार इन कथनों को छोड़कर कि डिक्री धोखाधड़ी, गलत प्रतिनिधित्व द्वारा प्राप्त की गई थी, और न ही आगे कोई प्रस्तुति दी गई थी कि न ही निर्णय देनदारों ने भी इसके समर्थन में कोई सबूत दिया। इसलिए, निष्पादन न्यायालय में न्यायसंगत था इस आपत्ति को खारिज करते हुए कि डिक्री धोखाधड़ी, गलत प्रतिनिधित्व आदि द्वारा प्राप्त की गई थी। जब धोखाधड़ी का आरोप लगाया जाता है तो उसे प्रमुख साक्ष्य द्वारा प्रस्तुत और स्थापित करने की आवश्यकता होती है। केवल यह आरोप लगाना कि धोखाधड़ी हुई, पर्याप्त नहीं है। इसलिए, इस सवाल पर कि क्या डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी या नहीं, प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश से रिपोर्ट मांगने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा पारित बाद के आदेश को निर्णय देनदारों को कमी को भरने का अवसर देना कहा जा सकता है। इसलिए, प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश से रिपोर्ट मांगने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए पाठ्यक्रम को मंजूरी नहीं दी जा सकती है। आदेश एक्स. एल. आई. के प्रावधानों के अनुसार, अपीलीय अदालत अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति दे सकती है, चाहे वह मौखिक हो या दस्तावेजी, यदि आदेश एक्स. एल. आई. नियम 27 में उल्लिखित शर्तें आदेश एक्स. एल. आई. नियम 27 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति देने के बाद संतुष्ट होती हैं। इसके बाद, प्रक्रिया प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश से रिपोर्ट मांगते समय उच्च न्यायालय द्वारा प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया है। जिस समय प्रधान नगर सिविल न्यायाधीश ने पक्षों को साक्ष्य का नेतृत्व करने की अनुमति दी और रिपोर्ट/निष्कर्ष प्रस्तुत किया कि डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी, उस समय निष्पादन न्यायालय–सह–आदेश न्यायालय द्वारा पहले से ही एक आदेश पारित किया गया था जिसमें निर्णय देनदारों द्वारा की गई आपत्तियों को खारिज कर दिया गया था कि डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी। इसलिए, जब तक और जब तक 03.03.1998 दिनांकित आदेश को दरकिनार नहीं किया जाता, तब तक न तो उच्च न्यायालय को प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश से रिपोर्ट मांगने में उचित ठहराया गया और न ही यहां तक कि प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश को निर्णय देनदारों को इस आरोप पर साक्ष्य का नेतृत्व करने की अनुमति देने में उचित ठहराया गया था कि डिक्री धोखाधड़ी, गलत प्रतिनिधित्व द्वारा प्राप्त की गई थी, जब निर्णय देनदार निष्पादन न्यायालय के समक्ष पहले कोई सबूत पेश करने में विफल रहे थे जब ऐसी आपत्तियां उठाई गई थीं। [पैरा 10–10.2] [1014 ए–एच; 1015 ए–सी]

1.3 उच्च न्यायालय ने इस पर भरोसा करने में गलती की प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट में कहा गया है कि डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी। उच्च न्यायालय ने यह ठहराते हुए गलती की कि आदेश धोखाधड़ी से प्राप्त किया गया था। निर्णय देनदार मूल प्रतिवादियों ने लिखित बयान या सहमति की शर्तों पर अपने हस्ताक्षर किए हैं। गिरवी रखी गई संपत्ति और वचन पत्र विवाद में नहीं हैं। इसलिए, जब मुकदमा दायर किया गया था और निर्णय देनदार राशि चुकाने के लिए और समय प्राप्त करना चाहते थे और जब तीन साल के भीतर 5,000/– रुपये की मासिक किस्त में

रुपये का भुगतान करने पर सहमति हुई, तो कुछ भी अप्राकृतिक नहीं था। [पैरा 11,11.1] [1015–डी; एफ–जी]

1.4 यह सच है कि धारा 96 (3) के अनुसार, पक्षों की सहमति से पारित डिक्री के खिलाफ अपील पर रोक लगाई जाएगी। हालाँकि, यह भी सच है कि आदेश XXIII नियम 3A के अनुसार कोई भी मुकदमा इस आधार पर डिक्री को दरकिनार करने के लिए नहीं होगा कि जिस समझौते पर डिक्री आधारित है वह वैध नहीं था। हालाँकि, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि जब 1976 के अधिनियम 104 द्वारा आदेश XLIII नियम 1 (एम) को हटा दिया गया था, तो साथ ही, नियम XLIII नियम 1ए को 1976 के अधिनियम 104 द्वारा जोड़ा गया था, जिसमें प्रावधान है कि समझौता दर्ज करने या समझौता दर्ज करने से इनकार करने के लिए एक मुकदमे में पारित डिक्री के खिलाफ अपील में, अपीलार्थी के लिए इस आधार पर डिक्री को चुनौती देने के लिए खुला होगा कि समझौता दर्ज किया जाना चाहिए था या नहीं किया जाना चाहिए था। इसलिए, उच्च न्यायालय उचित रूप से इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि फैसले और डिक्री के खिलाफ उच्च न्यायालय के समक्ष अपील विचारणीय थी। [पैरा 12] [1016–ए–सी]

बनवारी लाल बनाम। चंदो देवी ए. आई. आर. 1993 एस. सी. 1139 (पैरा 9) [1992] 3 पूरक। एससीआर 524–पुष्टि की गई।

1.5 जहां किसी डिक्री के निष्पादन में किसी अचल संपत्ति को बेचा गया है, वहां डिक्री धारक, या खरीदार, या कोई अन्य व्यक्ति जो किसी दर योग्य वितरण में हिस्सेदारी का हकदार है। परिसंपत्तियाँ, या जिनके हित बिक्री से प्रभावित होते हैं, वे किसी सामग्री के आधार पर बिक्री को अलग करने के लिए न्यायालय में आवेदन कर सकते हैं।

इसके प्रकाशन या संचालन में अनियमितता या धोखाधड़ी। इसलिए, आदेश XXI नियम 90 के अनुसार, अनियमितता या धोखाधड़ी के आधार पर बिक्री को अलग करने के लिए डिक्री धारक द्वारा इसे प्रकाशित करने या संचालित करने में भौतिक अनियमितता या धोखाधड़ी के आधार पर आवेदन किया जा सकता है। वर्तमान मामले में, इस प्रकार, यह निर्णय देनदारों का मामला नहीं है कि कोई भौतिक अनियमितता थी या

बिक्री के प्रकाशन या संचालन में धोखाधड़ी। उनकी आपत्ति यह है कि डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी। 1999 के आदेश XXI नियम 90 यानी आई. ए. संख्या 4 के तहत मूल निर्णय देनदारों द्वारा प्रस्तुत आवेदन को निष्पादन न्यायालय द्वारा सही ढंग से खारिज कर दिया गया था। [पैरा 13] [1016–ई–एच]

1.6 जिस समय निष्पादन न्यायालय ने 03.03.1998 दिनांकित आदेश पारित किया था, उस समय निर्णय देनदारों द्वारा कोई सबूत नहीं दिया गया था। यह आरोप कि आदेश धोखाधड़ी और गलत प्रतिनिधित्व द्वारा प्राप्त किया गया था, प्रमाणित नहीं किया गया था। उच्च न्यायालय को इस बात की सराहना करनी चाहिए थी कि वर्ष 2000 तक निर्णय देनदारों द्वारा दिनांक 1 के आदेश को भी चुनौती नहीं दी गई थी और इस बीच, दो आवेदन 1999 का आई. ए. 3 और एच. एस. गौतम बनाम आई. ए. नंबर 4 थे। 1999 आदेश XXI नियम 90 के तहत निर्णय देनदारों द्वारा प्रस्तुत किया गया था, जिसे खारिज कर दिया गया और गिरवी रखी गई संपत्ति अदालती नीलामी में बेचा गया था

और यहाँ तक कि बिक्री की पुष्टि की गई थी और बिक्री प्रमाण पत्र जारी किया गया था और इसे उप–पंजीयक के साथ पंजीकृत किया गया था। इसके अलावा, गुण और तथ्यात्मक रूप से भी, उच्च न्यायालय यह टिप्पणी करने में सही नहीं है कि नीलामी खरीदार एक प्रामाणिक खरीदार नहीं था। इसके अनुसार निर्णय लेनदार, साझेदारी फर्म पहले से ही बहुत पहले भंग हो चुकी थी और उसके बाद वादी को फर्म की संपत्ति, दावे और देनदारियां विरासत में मिलीं। जैसा कि 1999 के आई. ए. सं. 4 में आदेश पारित करते समय निष्पादन न्यायालय ने कहा था कि निर्णय देनदारों ने पूरी राशि भी जमा नहीं की थी। इसलिए उच्च न्यायालय ने 1999 के आई. ए. सं. 4 में पारित आदेश को रद्द करने और रद्द करने में त्रुटि की। विवादित सामान्य निर्णय और आदेश को रद्द कर दिया जाता है और अलग कर दिया जाता है। [पैरा 14,15] [1018 सी–ई]

पी. अरुमुघम (1990) 1 एससीसी 513: [1990] 1 एससीआर 78 – संदर्भित किया गया।

मामला कानून संदर्भ

[2006] 3 पूरक। एससीआर 370	पैरा 4	संदर्भित किया गया है
[1990] 1 एससीआर 78	पैरा 4.1	संदर्भित किया गया है
[1992] 3 पूरक। एससीआर 524	पैरा 12	पुष्टि की

अधिकारिता: सिविल अपील संख्या 1844/2010

कर्नाटक उच्च न्यायालय, बेंगलुरु द्वारा आर.एफ.ए. संख्या 274/2001, एम.एफ.ए. संख्या 3934/2000 एवं सी.आर.पी. संख्या 3297/2000 में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 16.09.2006 से

साथ में

सिविल अपील संख्या 1845/2010

आशीष चौधरी, ध्रुव सुराना, श्रीमती रवीना सुराना, रोहित अमित स्थालेकर, राहुल आर्य, सुश्री भारती त्यागी, पी. आर. रामासेश, ए. सुब्बा राव, अधिवक्ता उपस्थित पक्षकारों के लिए

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

न्यायमूर्ति, एम. आर. शाह

1. कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 16.09.2006 के विवादित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करना 2001 के आर. एफ. ए. सं. 274,2000 के एम. एफ. ए. सं. 3934 और 2000 के सी. आर. पी. सं. 3297 में बैंगलोर, मूल वादी और उसके बाद के नीलामी खरीदार, जिन्होंने निष्पादन कार्यवाही में अदालत की नीलामी में विचाराधीन संपत्ति खरीदी थी, ने वर्तमान अपीलों को प्राथमिकता दी है।

2. संक्षेप में वर्तमान अपीलों की ओर ले जाने वाले तथ्य इस प्रकार हैंः

2.1 कि, मूल वादी के मामले के अनुसार, यहाँ उत्तरदाता–मूल प्रतिवादी (इसके बाद 'मूल प्रतिवादी' के रूप में संदर्भित)

प्रतिवादियों) ने वर्ष 1990 में एक साधारण बंधक विलेख के माध्यम से मूल वादी (इसके बाद 'मूल वादी' के रूप में संदर्भित) और फिर वर्ष 1992 में एक वचन पत्र के माध्यम से रुपये की राशि उधार ली। साधारण बंधक विलेख को 11.07.1990 पर निष्पादित किया गया था। बंधक विलेख को मूल प्रतिवादियों के बीच बंधक के रूप में और एक साझेदारी फर्म सी. एच. शांतिलाल एंड कंपनी के बीच बंधक के रूप में निष्पादित किया गया था। मूल वादी श्री सी. एच. शांतिलाल का पुत्र है जो उस फर्म के भागीदारों में से एक था जिसे 17.12.1994 पर भंग कर दिया गया था। कि, मूल वादी के मामले के अनुसार, बंधककर्ता ने ऋण लिया था रु. 1,00,000/– गिरवीदार से बदले में अपने पिछले ऋण का भुगतान करने के लिए संपत्ति–सूट संपत्ति का गिरवी रखना। कि गिरवीदार को विलेख किए जाने के दिन से 5 साल की अवधि के भीतर गिरवीदार को डेढ़ प्रतिशत प्रति माह या 18 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज के साथ रु. कि बंधककर्ताओं द्वारा हर महीने 10 तारीख को या उससे पहले बंधककर्ता को ब्याज का भुगतान करना आवश्यक था। मूल वादी के अनुसार, अवधि के भीतर मूलधन या ब्याज का भुगतान करने में विफलता की स्थिति में, बंधककर्ता उक्त बंधक को लागू करने और संपत्ति या किसी अन्य कारण का कारण बनने का हकदार होगा। अंश को बेचा जाता है और आय को बंधक विलेख की संतुष्टि के लिए उपयुक्त बनाया जाता है। मूल द्वारा एक वचन पत्र भी निष्पादित किया गया था प्रतिवादियों ने 13.12.1992 पर Rs.50,000/– की एक और राशि लेते हुए और गिरवी रखी गई संपत्ति में एक और आरोप लगाया। कि, चूंकि प्रतिवादियों–बंधककर्ताओं ने उपरोक्त राशि का भुगतान नहीं किया था, इसलिए वादी ने बैंगलोर में विद्वान सिटी सिविल जज के न्यायालय के समक्ष 1995 की ओ. एस. संख्या 3376 पर ब्याज के साथ रु. यह भी प्रार्थना की गई कि विफलता पर प्रतिवादियों के डिक्रीटल राशि का भुगतान करने के लिए, वादी को गिरवी रखी गई संपत्ति और डिक्रीटल राशि पर समायोजित किए जाने के लिए इस प्रकार प्राप्त बिक्री विचारों को बेचने की स्वतंत्रता होगी। वादी के अनुसार, प्रतिवादियों ने 31.05.1995 पर एक लिखित बयान दायर किया और स्वीकार किया रु. 1,50,000/– का उधार। वादी के अनुसार, प्रतिवादियों का प्रतिनिधित्व एक अधिवक्ता ने किया था। 01.06.1995 पर वादी और प्रतिवादियों के बीच एक समझौता/समझौता किया गया था। प्रतिवादी तीन साल के भीतर वादी को 5,000/– रुपये की मासिक किस्त में रुपये की राशि का भुगतान करने के लिए सहमत हुए। विद्वत विचारण न्यायालय ने तदनुसार निर्णय और डिक्री दिनांक 01.06.1995 के माध्यम से समझौते के संदर्भ में मुकदमे का फैसला सुनाया। कि वादी ने एक निष्पादन याचिका दायर की सिटी सिविल न्यायालय के समक्ष 1996 की निष्पादन याचिका संख्या 232 न्यायाधीश, बैंगलोर 28.02.1996 पर। निर्णय देनदार–प्रतिवादी ने निष्पादन याचिका में 21.06.1996 पर एक वकील के माध्यम से उपस्थिति दर्ज कराई। कि निर्णय देनदार–प्रतिवादी ने निष्पादन याचिका में आपत्तियां दायर कीं और तर्क दिया कि 01.06.1995 दिनांकित डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी। दिनांक 1 के आदेश द्वारा, निष्पादन न्यायालय ने निर्णय देनदार–प्रतिवादी की आपत्तियों को खारिज कर दिया और विशेष रूप से कहा कि निर्णय देनदार की आपत्तियों कि डिक्री धोखाधड़ी, गलत प्रतिनिधित्व आदि द्वारा प्राप्त की गई है, को खारिज कर दिया गया है। निर्णय देनदार द्वारा उठाई गई आपत्तियों को खारिज करते हुए, विद्वान

निष्पादक न्यायालय ने विशेष रूप से कहा कि निर्णय देनदार अपनी आपत्तियों के समर्थन में कोई सबूत देने में विफल रहा है कि डिक्री धोखाधड़ी या गलत प्रतिनिधित्व द्वारा प्राप्त की गई थी। इसके बाद, विद्वत निष्पादन न्यायालय ने 21.11.1998 पर गिरवी रखी गई संपत्ति की बिक्री की घोषणा जारी की। बंधक की गई संपत्ति को निष्पादन न्यायालय द्वारा बिक्री के लिए रखा गया था। 2010 की सिविल अपील संख्या 1845 में अपीलार्थी को सबसे अधिक बोली लगाने वाला घोषित किया गया था। जिस दिन बिक्री आयोजित की गई थी, उसी दिन उन्होंने बोली राशि का 25 प्रतिशत 11.02.1999 पर जमा कर दिया था। नीलामी खरीदार ने पेशकश की रु. 4,50,000/– और उनकी बोली निष्पादन न्यायालय द्वारा स्वीकार कर ली गई। नीलामी खरीदार की बोली स्वीकार किए जाने के बाद, निर्णय देनदारों ने 1999 की आई. ए. सं. 03 को धारा 151 सी. पी. सी. के तहत निष्पादन याचिका में आई. ए. सं. 3 पर विद्वत अतिरिक्त नगर सिविल न्यायाधीश (निष्पादन न्यायालय) के समक्ष विषय बंधक संपत्ति की बिक्री के संबंध में आगे की कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए दायर किया। 22.02.1999 पर, निर्णय देनदारियों ने दायर किया 1999 का एक अन्य आई. ए. सं. 04, नियम 90 के साथ पठित आदेश XXI और नियम 47 और सी. पी. सी. की धारा 151 के साथ पठित आदेश XXI के तहत निष्पादन याचिका में, वस्तु बंधक संपत्ति के संबंध में दिनांक 11.02.1999 और 18.02.1999 की अदालती नीलामी/बिक्री को दरकिनार करने के लिए।

30.10.1999 विद्वत निष्पादन न्यायालय ने उपरोक्त दोनों को खारिज कर दिया

अनुप्रयोग। 1999 के आई. ए. नं. 3 को खारिज करते हुए, विद्वत निष्पादन न्यायालय ने कहा कि दिनांक 1 का पूर्व आदेश एक बोलने वाला आदेश था और निर्णय देनदारों द्वारा उठाई गई आपत्तियों को खारिज कर दिया गया था और उन्हें अंतिम रूप दिया गया था क्योंकि किसी भी सक्षम अपीलीय मंच के समक्ष निर्णय देनदार द्वारा उन पर हमला नहीं किया गया है। विद्वान निष्पादन न्यायालय ने यह भी कहा कि निष्पादन न्यायालय डिक्री के पीछे नहीं जा सकता है ताकि डिक्री की शुद्धता और वैधता के सवाल का फैसला किया जा सके, जब डिक्री अंतिम हो गई हो। विद्वत निष्पादन न्यायालय ने 1999 की आई. ए. सं. 04 को इस आधार पर खारिज कर दिया कि निर्णय देनदारों ने ऋण की अवमूल्यन राशि जमा नहीं की है।

रुपये. 4,50,000/– आदेश XXI नियम 90 के संदर्भ में ब्याज के साथ और इसलिए यह उन्हें आदेश XXI नियम 90 की आवश्यकता के अनुसार बिक्री को अलग रखने के लिए किसी भी राहत का हकदार नहीं बनाता है। कि, इसके बाद, नीलामी के पक्ष में गिरवी रखी गई संपत्ति की बिक्री की पुष्टि हुई

17.11.1999 पर खरीदार। नीलामी खरीदार के पक्ष में अदालत द्वारा बिक्री प्रमाण पत्र जारी किया गया था और बिक्री उप–पंजीयक के पास 23.11.1999 पर पंजीकृत की गई थी। कि इसके बाद निर्णय देनदारों ने 1999 के आई. ए. नंबर 4 में विद्वत निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित आदेश के खिलाफ उच्च न्यायालय के समक्ष 1999 का सिविल संशोधन आवेदन संख्या 3699 दायर किया, जिसे बाद में परिवर्तित कर दिया गया था।

2000 के एम. एफ. ए. सं. 3934 में। इसके बाद निर्णय देनदारों ने 1999 के आई. ए. नंबर 3 में विद्वत निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 30.10.1999 के आदेश के खिलाफ उच्च न्यायालय में

1999 का एक और नागरिक संशोधन आवेदन संख्या 3700 दायर किया। उच्च न्यायालय ने अपने दिनांक 06.01.2000 के आदेश के माध्यम से 1999 के सिविल संशोधन आवेदन संख्या 3700 को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि धोखाधड़ी से संबंधित मुद्दे ने अंतिमता प्राप्त कर ली है क्योंकि विद्वान निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित दिनांकित आदेश ने निर्णय देनदार की आपत्तियों को खारिज कर दिया था और इसे चुनौती नहीं दी गई थी। यह महसूस करने के बाद कि निर्णय देनदारों को आपत्तियों को खारिज करने के लिए दिनांकित 03.03.1998 के आदेश को चुनौती देने की आवश्यकता थी, इसके बाद, दिनांकित 03.03.1998 के आदेश की तारीख से दो साल की अवधि के बाद, निर्णय देनदारों ने सिविल संशोधन आवेदन सं. 3297 उच्च न्यायालय के समक्ष 2000 का। इसके बाद और यह महसूस करने के बाद कि 1995 के ओ. एस. संख्या 3376 में विद्वत विचारण न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 1 के निर्णय और डिक्री को चुनौती न देना उनके रास्ते में आड़े आएगा, निर्णय और डिक्री पारित करने की तारीख से पांच साल की अवधि के बाद, निर्णय देनदारों ने आर. एफ. ए. संख्या 1 के रूप में एक अपील दायर की। 274 2001 में उच्च न्यायालय में। उक्त अपील को एच. एस. गौतम बनाम को प्राथमिकता दी गई। उच्च न्यायालय ने 10.06.2004 पर एक समझौता याचिका तैयार की थी जिसमें निर्णय देनदार विद्वान निचली अदालत द्वारा पारित डिक्री के पूर्ण और अंतिम निपटान में रु. 6,96,062/– का भुगतान करने के लिए सहमत हुए थे। हालांकि, समझौता याचिका दायर करने के समय, निर्णय देनदार कि विद्वान प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश ने उच्च न्यायालय के समक्ष 06.12.2005 दिनांकित रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें उन्होंने यह निष्कर्ष दर्ज किया कि 1995 के ओ. एस. सं. 3376 में डिक्री धोखाधड़ी द्वारा प्राप्त की गई थी। दिनांकित प्रधान नगर सिविल न्यायाधीश द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर भरोसा करते हुए 06.12.2005 और यह मत व्यक्त करते हुए कि 1995 के ओ. एस. सं. 3376 में डिक्री धोखाधड़ी द्वारा प्राप्त की गई थी, उच्च न्यायालय ने अपने विवादित निर्णय और दिनांक 1 के आदेश के माध्यम से 2001 के आर. एफ. ए. सं. 274,2000 के एम. एफ. ए. सं. 3934 और 2000 के सी. आर. पी. सं. 3297 की अपीलों को अनुमति दी है और उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित सामान्य निर्णय और आदेश का संचारी भाग निम्नानुसार हैः

" आर. एफ. ए. सं. 274/2001 को लागत के साथ अनुमति है। XV एडिशनल के न्यायालय द्वारा पारित आदेश और डिक्री। ओ. एस. नं. 3376/1995 दिनांक 1.6.1995 में सिटी सिविल जज, बैंगलोर को अलग कर दिया जाता है और अतिरिक्त न्यायाधीश को मुकदमा भेजा जाता है। सिटी सिविल जज, बैंगलोर, कानून के अनुसार नए सिरे से निपटान के लिए। प्रतिवादियों को आज से साठ दिनों के भीतर निचली अदालत में लिखित बयान दायर करने की अनुमति है। एम. एफ. ए. सं. 3394/2000 की अनुमति है। 30.10.1999 दिनांकित आदेश को अलग रखा गया है। हालांकि, नीलामी खरीदार के लिए यह खुला है कि वह राशि की वापसी के लिए निचली अदालत के समक्ष आवेदन कर सकता है

उसके द्वारा जमा की गई राशि और बिक्री विलेख के पंजीकरण और उसके द्वारा किए गए अन्य खर्चों के लिए उसके द्वारा खर्च की गई राशि की प्रतिपूर्ति और निचली अदालत उक्त आवेदन पर विचार करेगी और उसका निपटारा करेगी। उसी के अनुसार, कानून के अनुसार। सीआरपी No.3297/2000 की अनुमति है। दिनांकित आदेश 3.3.98 सेट किया गया है

2.2 अपीलों को अनुमति देने में उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित सामान्य निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करना और 1995 के ओ. एस. सं. 3376 में पारित दिनांकित 01.06.1995 के निर्णय और डिक्री को रद्द करना और अलग करना; विद्वत निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 30.10.1999 के आदेश को रद्द करना और रद्द करना और विद्वत द्वारा पारित दिनांक 03.03.1998 के आदेश को रद्द करना और रद्द करना। निष्पादन अदालत ने निर्णय देनदारों द्वारा उठाई गई आपत्ति को खारिज करते हुए, मूल प्रतिवादियों के साथ–साथ सफल नीलामी खरीदार ने वर्तमान अपीलों को प्राथमिकता दी है।

3. मूल वादी की ओर से पेश हुए विद्वान अधिवक्ता श्री राहुल आर्य ने जोर देकर कहा है कि उच्च न्यायालय ने सहमति आदेश को रद्द करने और अलग करने में और 01.06.1995 दिनांकित आदेशों को रद्द करने और अलग करने में भी त्रुटि की और 30.10.1999 . यह जोरदार रूप से प्रस्तुत किया जाता है कि उच्च न्यायालय ने विद्वान प्रधान नगर सिविल न्यायाधीश द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर भरोसा करने में भौतिक रूप से गलती की है कि 1995 की ओ. एस. संख्या 3376 में डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई है। यह जोरदार रूप से प्रस्तुत किया जाता है कि इस प्रकार प्रतिवादियों ने भी प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश के समक्ष कार्यवाही में स्वीकार किया कि उन्होंने पंजीकृत बंधक विलेख के तहत संपत्ति को रुपये में गिरवी रखा था और उन्होंने शांतिलाल से अपने पक्ष में एक प्रो–नोट निष्पादित करके 1,000 रुपये की अतिरिक्त राशि ली थी। यह प्रस्तुत किया जाता है कि उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि राशि का भुगतान नहीं किया गया था। यह प्रस्तुत किया जाता है कि वास्तव में और एक विचार के बाद, प्रतिवादी एक मामला लेकर आया कि उसने पैसे चुका दिए। हालाँकि, जैसा कि शहर के प्रधान सिविल न्यायाधीश ने कहा, वह भुगतान को साबित नहीं कर सके। यह प्रस्तुत किया जाता है कि प्रतिवादी की ओर से यह आचरण कि वह एक मामले के साथ आया है कि 1995 की ओ. एस. संख्या 3376 में सहमति डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी, सहमति डिक्री से बाहर निकलने का बेईमान प्रयास है।

3.1 यह प्रस्तुत किया जाता है कि वास्तव में मूल प्रतिवादी संख्या 1 ने वकालतनामा, लिखित बयान और समझौते पर अपने हस्ताक्षर किए थे। कार्य इसलिए यह प्रस्तुत किया जाता है कि यह जाली हस्ताक्षर का मामला नहीं है। यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश से रिपोर्ट बुलाना और उन्हें इस बात की जांच करने का निर्देश देना कि क्या डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी, सी. पी. सी. के प्रावधानों के विपरीत थी और ऐसी प्रक्रिया कानून के लिए अज्ञात है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इस तरह मामले को विद्वान प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश को संदर्भित करके, उच्च न्यायालय ने प्रतिवादियों को कमी को भरने के लिए पर्याप्त अवसर दिया। यह है प्रस्तुत किया कि इस प्रकार विद्वत निष्पादन न्यायालय ने एच. एस. गौतम बनाम का आदेश पारित किया। दिनांक 03.03.1998 ने विशेष रूप से देखा कि निर्णय देनदार प्रमुख ठोस साक्ष्य द्वारा यह साबित करने में विफल रहे हैं कि डिक्री प्राप्त की गई थी धोखाधड़ी से। यह प्रस्तुत किया जाता है कि निर्णय देनदारों द्वारा उठाई गई आपत्तियों को खारिज करने वाले दिनांक 1 के आदेश के दो साल बाद, एक संशोधन देर से और विचार के बाद दायर किया गया था।

3.2 यह प्रस्तुत किया जाता है कि सहमति डिक्री के खिलाफ उच्च न्यायालय के समक्ष पहली अपील स्वयं बनाए रखने योग्य नहीं थी सी. पी. सी. के आदेश XXII के साथ पठित धारा 96 के

प्रावधान। यह प्रस्तुत किया जाता है कि उच्च न्यायालय ने उचित रूप से सराहना नहीं की है और इस तथ्य पर विचार नहीं किया है कि सहमति डिक्री के खिलाफ, अपील नहीं होगी बनाए रखने योग्य। यह प्रस्तुत किया जाता है कि उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने में भौतिक रूप से गलती की है कि अपील विचारणीय होगी।

3.3 यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि उच्च न्यायालय यह समझने में विफल रहा है कि निर्णय देनदार–मूल प्रतिवादियों ने चुनौती दी थी केवल वर्ष 2001 में 01.06.1995 दिनांकित सहमति डिक्री। यह प्रस्तुत किया जाता है कि कार्यवाही की संख्या के बीच में शुरू किया गया था निष्पादन न्यायालय और आदेश निष्पादन न्यायालय द्वारा दिनांकित 03.03.1998, 30.10.1999 द्वारा पारित किए गए थे और यहां तक कि गिरवी रखी गई संपत्ति भी थी नीलामी की गई और बिक्री प्रमाण पत्र नवंबर 1999 के महीने में ही नीलामी खरीदार के पक्ष में जारी किया गया था और निर्णय देनदार मूल प्रतिवादियों ने इस आधार पर सहमति आदेश को चुनौती नहीं दी कि यह 2001 तक धोखाधड़ी से प्राप्त किया गया था। इसलिए यह प्रस्तुत किया जाता है कि उत्तरदाताओं का आचरण विलंब और बाधाओं से ग्रस्त है।

3.4 यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि उच्च न्यायालय यह समझने में विफल रहा है कि समझौते के आदेश के अनुसार, निष्पादन

कार्यवाही दायर की गई, बिक्री सूचना जारी की गई, अचल संपत्ति बेची गई, नीलामी खरीदार के पक्ष में बिक्री की पुष्टि हुई और नीलामी खरीदार ने अदालत में बिक्री के विचार का भुगतान किया और उसके बाद भी बिक्री प्रमाण पत्र जारी किया गया और वर्ष 1999 में ही उप–पंजीयक के समक्ष पंजीकृत किया गया।

3.5 मूल वादी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे यह प्रस्तुत किया जाता है कि निर्णय देनदार निष्पादन न्यायालय के समक्ष बिक्री विचार की राशि जमा करने में विफल रहे, जिसे सी. पी. सी. के आदेश XXI नियम 90 के तहत जमा करने की आवश्यकता थी। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इसलिए उच्च न्यायालय ने रद्द करने में भौतिक रूप से गलती की है और न केवल सहमति आदेश, बल्कि 01.06.1995 और 30.10.1999 दिनांकित आदेशों को भी अलग करना।

3.6 यह प्रस्तुत किया जाता है कि विद्वान प्रधान नगर सिविल न्यायाधीश ने निर्णय देनदारों–मूल प्रतिवादियों की याचिका पर विश्वास करने में गलती की कि चूंकि समझौता प्रक्रिया और लिखित बयान अंग्रेजी में थे और वह केवल स्थानीय भाषा जानते थे, इसलिए उन्हें नहीं पता था कि लिखित बयान और सहमति समझौते विलेख में क्या था। यह प्रस्तुत किया जाता है कि मूल प्रतिवादियों ने बंधक विलेख पर हस्ताक्षर किए हैं जो अंग्रेजी में था और प्रत्येक पृष्ठ पर उनके द्वारा भी हस्ताक्षर किए गए थे, यह नहीं माना जा सकता है कि प्रतिवादी केवल स्थानीय भाषा से परिचित थे।

4. 2010 की सिविल अपील संख्या 1845 में नीलामी खरीदार अपीलार्थी की ओर से पेश विद्वान वकील ने आगे कहा है कि सहमति डिक्री को चुनौती देने वाली उच्च न्यायालय के समक्ष अपील आदेश XXIII नियम 3 और धारा 96 (3) सी. पी. सी. में निहित बाधा को देखते हुए बिल्कुल भी बनाए रखने योग्य नहीं थी। उपरोक्त निवेदन के समर्थन में, उन्होंने पुष्प देवी भगत बनाम मामले में इस न्यायालय के फैसले पर बहुत अधिक भरोसा किया है। राजिंदर सिंह (2006) 5 एससीसी 566।

4.1 नीलामी खरीदार की ओर से पेश विद्वान वकील द्वारा आगे यह प्रस्तुत किया जाता है कि नीलामी खरीदार

उसे उच्चतम बोलीदाता घोषित किए जाने के बाद निष्पादन कार्यवाही में संपत्ति खरीदी गई। यह प्रस्तुत किया जाता है कि वर्ष 1999 में ही नीलामी खरीदार ने निष्पादन न्यायालय के समक्ष बिक्री विचार की पूरी राशि जमा कर दी थी और यहां तक कि नीलामी खरीदार के पक्ष में एक बिक्री प्रमाण पत्र भी जारी किया गया था। यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि इसलिए नियम 94 के साथ पठित आदेश XXI नियम 92 को ध्यान में रखते हुए एक बार बिक्री निरपेक्ष हो गई है और जैसा कि इस न्यायालय द्वारा चिन्नाम्मल v के मामले में अभिनिर्धारित किया गया है। पी. अरुमुघम (1990) 1 एस. सी. सी. 513, डिक्री का बाद में उलटना यह नीलामी खरीदार को प्रभावित नहीं करेगा जो डिक्री का पक्षकार नहीं है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि जैसा कि इस न्यायालय द्वारा उपरोक्त निर्णय में अभिनिर्धारित किया गया है, मुकदमेबाजी से अनभिज्ञ होकर प्रामाणिक रूप से खरीदी गई संपत्ति की रक्षा की जानी चाहिए। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इस तथ्य के बावजूद कि वर्ष 1999 में नीलामी खरीदार ने पूरी राशि जमा की थी, क्योंकि निर्णय देनदारों द्वारा बाद में कार्यवाही शुरू की गई थी, नीलामी खरीदार उस संपत्ति का आनंद लेने की स्थिति में नहीं है जिसे नीलामी खरीदार ने निष्पादन कार्यवाही में नीलामी में खरीदे गए पूर्ण बिक्री प्रतिफल के भुगतान पर खरीदा है।

4.2 यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि उच्च न्यायालय निर्णय देनदारों–मूल प्रतिवादियों की ओर से आचरण पर विचार करने में विफल रहा है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि उच्च न्यायालय के समक्ष भी एक समझौता याचिका एच. एस. गौतम बनाम थी। तैयार किया गया जिसमें निर्णय देनदार–मूल प्रतिवादी सहमत हुए विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित डिक्री के पूर्ण और अंतिम निपटारे में रु. 6,96,062/– का भुगतान करें, हालांकि, समझौता याचिका के समय, उत्तरदाताओं ने उनके द्वारा सहमत समझौते से पीछे हट गए। यह है। प्रस्तुत किया कि विद्वान प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश के समक्ष, निर्णय देनदार–मूल प्रतिवादी ने उक्त समझौता याचिका को स्वीकार किया और उन्होंने स्वीकार किया कि उन्होंने स्वेच्छा से और स्वतंत्र सहमति के साथ समझौता याचिका पर अपने हस्ताक्षर किए। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इसलिए मूल देनदार के रूप में प्रतिवादियों का आचरण पूरी तरह से ईमानदार नहीं है और कार्यवाही में देरी करना और नीलामी खरीदार को वर्ष 1999 में खरीदी गई संपत्ति का उपयोग करने से वंचित करना है।

5. मूल प्रतिवादियों की ओर से पेश हुए विद्वान अधिवक्ता श्री पी. आर. रामासेश–फैसले के देनदारों ने आरोपित का समर्थन किया है। उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश।

5.1 यह जोरदार रूप से प्रस्तुत किया जाता है कि विद्वान प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश ने अपनी रिपोर्ट में, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा बुलाया गया था, विशेष रूप से कहा है कि सहमति आदेश धोखाधड़ी से प्राप्त किया गया था। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इसलिए विद्वान प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश की रिपोर्ट/निष्कर्ष पर भरोसा करते हुए और जब उच्च न्यायालय भी इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि सहमति डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी, तो उच्च न्यायालय ने सहमति डिक्री को सही ढंग से रद्द कर दिया है और निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित 01.06.1995 दिनांकित निर्णय और डिक्री और 30.10.1999 दिनांकित आदेश को सही तरीके से रद्द कर दिया है और गुण–दोष के

आधार पर मुकदमे का फैसला करने के लिए मामले को विद्वान निचली अदालत को सही तरीके से भेज दिया है।

5.2 यह प्रस्तुत किया जाता है कि उच्च न्यायालय ने सही निर्णय दिया है कि सहमति आदेश के खिलाफ पहली अपील बनाए रखने योग्य होगी।

5.3 यह प्रस्तुत किया जाता है कि विद्वान प्राचार्य द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष सिटी सिविल जज ने कहा कि धोखाधड़ी से प्राप्त सहमति आदेश साक्ष्य के पुनर्मूल्यांकन पर है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि उच्च न्यायालय ने निचली अदालत को इस बात की जांच करने का निर्देश दिया कि क्या डिक्री धोखाधड़ी, गलत प्रतिनिधित्व द्वारा प्राप्त की गई थी। यह प्रस्तुत किया जाता है कि एक बार जब यह देखा जाता है और यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि सहमति डिक्री धोखाधड़ी, गलत प्रतिनिधित्व द्वारा शुरू से ही और मुकदमा दायर करने से पहले भी प्राप्त की गई थी, तो ऐसी सहमति डिक्री कानून की नजर में एक डिक्री नहीं है और इसलिए उच्च न्यायालय ने सहमति डिक्री को सही ढंग से अलग कर दिया है और गुण–दोष के आधार पर मुकदमे का फैसला करने के लिए मामले को ट्रायल कोर्ट को भेज दिया है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इसलिए अन्य सभी बाद के आदेश निष्पादन [2021] 4 एस. सी. आर. में पारित किए गए। कार्यवाही अमान्य होगी और इसलिए उन्हें उच्च न्यायालय द्वारा उचित रूप से दरकिनार कर दिया जाता है।

5.4 उपरोक्त प्रस्तुतियाँ करते हुए, वर्तमान अपीलों को खारिज करने का अनुरोध किया जाता है।

6. में पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील को सुना लंबाई।

6.1 शुरुआत में, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि विवादित सामान्य निर्णय और आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने पहली अपील को स्वीकार कर लिया है मूल प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत किया गया और 1995 की ओ. एस. संख्या 3376 दिनांक 01.06.1995 में विद्वत विचारण न्यायालय द्वारा पारित सहमति डिक्री को रद्द कर दिया और रद्द कर दिया, गिरवी रखी गई संपत्ति के होने के बहुत बाद। निष्पादन कार्यवाही में बेचा गया और नीलामी खरीदार के पक्ष में बिक्री की पुष्टि की गई और बिक्री प्रमाण पत्र भी जारी किया गया। विवादित निर्णय और आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने 1999 के आई. ए. संख्या 4 में विद्वत निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 30.10.1999 के आदेश को भी रद्द कर दिया है, जिसके द्वारा विद्वत निष्पादन न्यायालय ने आदेश XXI नियम 90 के तहत निर्णय देनदारों द्वारा प्रस्तुत आवेदन को खारिज कर दिया। विवादित निर्णय और आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने संशोधन आवेदन को 2000 का सी. आर. पी. संख्या 3297 होने की भी अनुमति दी है और निर्णय देनदारों द्वारा उठाई गई आपत्तियों को खारिज करने वाले दिनांकित आदेश को भी रद्द कर दिया है, विशेष रूप से, निर्णय देनदारों द्वारा उठाई गई आपत्ति को खारिज करते हुए कि सहमति आदेश अपीलें करें।

7. इसलिए, वर्तमान अपीलों में इस न्यायालय के विचार के लिए जो संक्षिप्त प्रश्न उठाया गया है, वह यह है कि क्या तथ्यों में और मामले की परिस्थितियाँ, विशेष रूप से, जब बंधक की गई संपत्ति को निष्पादन कार्यवाही में अदालत की नीलामी में बेचा गया था और नीलामी खरीदार के पक्ष में बिक्री की पुष्टि की गई थी और बिक्री प्रमाण पत्र जारी किया गया था और बिक्री की पुष्टि निर्णय देनदारों द्वारा

उठाई गई आपत्तियों को खारिज करने के बाद की गई थी, विशेष रूप से, यह आपत्ति कि सहमति डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी और कि शुरू में सहमति डिक्री को बिल्कुल भी चुनौती नहीं दी गई थी और न केवल एच. एस. गौतम बनाम के आदेश को भी।

8. उपरोक्त प्रश्नों पर विचार करते समय, सहमति डिक्री के बाद निर्णय देनदारों की ओर से आचरण/निष्क्रियता पारित किए जाने पर विचार किया जाना आवश्यक है, जिन्हें संदर्भित किया जाता है यहाँ ऊपर और जिन्हें फिर से निम्नानुसार दोहराया गया हैः

8.1 कि विद्वत विचारण न्यायालय ने 01.06.1995 पर सहमति आदेश पारित किया और आदेश दिया कि प्रतिवादी उस दिन से तीन साल के भीतर वादी को 5,000/– रुपये की मासिक किस्त में रु. शुरुआत में, यह ध्यान रखना आवश्यक है कि साधारण बंधक विलेख का निष्पादन, वचन पत्र का निष्पादन और ऋण की राशि लेना, निर्णय देनदारों द्वारा विवादित नहीं किया गया है। कि, 01.06.1995 पर सहमति डिक्री पारित होने के बाद, निर्णय लेनदार–मूल वादी ने अतिरिक्त सिटी सिविल जज, बैंगलोर के समक्ष एक निष्पादन याचिका दायर की, जो 28.02.1996 पर 1996 की निष्पादन याचिका संख्या 232 थी। निर्णय देनदार 21.06.1996 पर निष्पादन याचिका में एक अधिवक्ता के माध्यम से उपस्थित हुए। इसलिए, कम से कम, यह कहा जा सकता है कि निर्णय देनदार कम से कम 21.06.1996 पर सहमति डिक्री के बारे में जानते थे। उक्त सहमति आदेश को इस आधार पर चुनौती देने के बजाय कि यह धोखाधड़ी से प्राप्त किया गया था, निर्णय देनदारों ने निष्पादन याचिका में अपनी आपत्तियां दायर कीं और तर्क दिया कि यह धोखाधड़ी से प्राप्त किया गया था। इस तरह की आपत्तियां 04.10.1996 पर दायर की गई थीं। ज्ञात निष्पादन न्यायालय ने दिनांक 03.03.1998 के एक तर्कपूर्ण आदेश द्वारा निर्णय देनदारों की आपत्तियों को खारिज कर दिया कि डिक्री प्राप्त की गई है। धोखाधड़ी, गलत प्रतिनिधित्व आदि द्वारा, विशेष रूप से यह देखते हुए कि आपत्तियां दायर करने के बाद, मामले को सुनवाई के लिए रखा जा रहा था, लेकिन निर्णय देनदारों ने या तो उस ओर से कोई सबूत पेश नहीं किया और न ही उन्होंने किसी तर्क को संबोधित किया है और इसलिए, निर्णय देनदारों द्वारा लगाए गए धोखाधड़ी आदि के आरोप के किसी भी सबूत के अभाव में, आपत्तियों को खारिज करना होगा। कि निर्णय देनदारियों ने उच्च मंच के समक्ष 03.03.1998 दिनांकित आदेश को चुनौती नहीं दी। इसके बाद, दिनांकित आदेश के पारित होने के आठ महीने की अवधि के बाद 03.03.1998 , विद्वत निष्पादन न्यायालय ने 21.11.1998 पर गिरवी रखी गई संपत्ति की बिक्री की घोषणा जारी की। स्पॉट सेल 11.02.1999 पर आयोजित की गई थी। नीलामी खरीदार–सिविल अपील सं. 1845/2010 में अपीलार्थी को सबसे अधिक बोली लगाने वाला घोषित किया गया था। उन्होंने बोली राशि का 25 प्रतिशत जमा किया। उनकी बोली को उच्चतम बोलीदाता के रूप में स्वीकार किए जाने के बाद, निष्पादन न्यायालय ने 18.02.1999 पर बिक्री/बोली की पुष्टि की। इसके बाद, निर्णय देनदारों ने वस्तु बंधक संपत्ति की बिक्री के संबंध में आगे की कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए 1999 का आई. ए. सं. 3 निष्पादन न्यायालय के समक्ष दायर किया। निर्णय देनदारियों ने 1999 का आई. ए. नंबर 4 भी निष्पादन न्यायालय के समक्ष आदेश XXI नियम 90 के तहत नियम 47 सी. पी. सी. के साथ पढ़ा ताकि विषय बंधक संपत्ति के संबंध में अदालत की बिक्री को दरकिनार किया जा सके। विद्वत निष्पादन न्यायालय ने उपरोक्त दोनों आवेदनों को खारिज कर दिया। विद्वत निष्पादन न्यायालय ने 1999 के आई. ए. संख्या 3 को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि 03.03.1998 दिनांकित आदेश ने निर्णय द्वारा दायर आपत्तियों को

खारिज कर दिया है। ऋणदाताओं ने अंतिमता प्राप्त कर ली है क्योंकि किसी भी अपीलीय मंच के समक्ष उस पर हमला नहीं किया गया है और यह कि निष्पादन न्यायालय डिक्री के पीछे नहीं जा सकता है ताकि डिक्री की शुद्धता और वैधता के सवाल का फैसला किया जा सके, जब डिक्री अंतिम हो गई थी। विद्वत निष्पादन न्यायालय ने 1999 के आई. ए. सं. 4 को इस आधार पर खारिज कर दिया कि निर्णय देनदारों ने आदेश 21 नियम 90 के संदर्भ में ब्याज के साथ रु. 1/– की डिक्रीटल राशि जमा नहीं की है और इसलिए निर्णय देनदार आदेश 21 नियम 90 की आवश्यकता के अनुसार बिक्री को अलग करने की मांग करने के हकदार नहीं हैं। कि, उसके बाद विद्वान निष्पादन न्यायालय 17.11.1999 पर नीलामी खरीदार के पक्ष में बिक्री की पुष्टि की। 23.11.1999 पर, नीलामी खरीदार के पक्ष में अदालत द्वारा बिक्री प्रमाण पत्र जारी किया गया था और बिक्री उप–पंजीयक के साथ पंजीकृत की गई थी। कि, बिक्री की पुष्टि होने और नीलामी खरीदार के पक्ष में बिक्री प्रमाण पत्र जारी होने के बाद और उप–पंजीयक के पास बिक्री पंजीकृत होने के बाद, निर्णय देनदारों ने 1999 के आई. ए. संख्या 4 को खारिज करने वाले आदेश के खिलाफ कर्नाटक उच्च न्यायालय में 1999 की सिविल संशोधन याचिका संख्या 3699 दायर की, जिसे बाद में 2000 के एम. एफ. ए. संख्या 3934 में परिवर्तित कर दिया गया। इसके बाद निर्णय देनदारों ने निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 1 के आदेश के खिलाफ बैंगलोर में कर्नाटक उच्च न्यायालय में 1999 की सिविल संशोधन याचिका संख्या 3700 भी दायर की। 1999 की सिविल संशोधन याचिका संख्या 3700 को उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 1 के एक आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था जिसमें कहा गया था कि निर्णय देनदारों की आपत्तियों को खारिज करने वाले दिनांक 2 के आदेश के मद्देनजर डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी, जिसे अंतिम रूप दिया गया है। इसके बाद, लगभग दो साल के अंतराल के बाद, निर्णय देनदारों ने 2000 का सी. आर. पी. संख्या 3297 दाखिल करके 03.03.1998 दिनांकित आदेश को चुनौती दी। इस स्तर पर, यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि इस समय तक निर्णय देनदारों ने उच्च न्यायालय के समक्ष 01.06.1995 दिनांकित डिक्री को चुनौती नहीं दी थी कि, 01.06.1995 दिनांकित निर्णय और डिक्री पारित होने की तारीख से पांच साल की अवधि के बाद निर्णय देनदारों ने आर. एफ. ए. नं.274 विद्वत विचारण न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 1 दिनांकित डिक्री को इस आधार पर चुनौती देते हुए कि यह धोखाधड़ी और गलत प्रतिनिधित्व द्वारा प्राप्त किया गया है। अपील दायर करने की तारीख से पांच साल की अवधि के बाद, उच्च न्यायालय ने शहर के प्रधान सिविल न्यायाधीश से एक निष्कर्ष/रिपोर्ट मांगी और उन्हें इस बात की जांच करने का निर्देश दिया कि क्या दिनांकित आदेश धोखाधड़ी से प्राप्त किया गया था। उक्त आदेश की वैधता और औचित्य पर नीचे एक उचित स्तर पर विचार किया जाएगा। विद्वान प्रधान नगर सिविल न्यायाधीश के समक्ष, निर्णय देनदारियों ने अपने दावे के समर्थन में साक्ष्य का नेतृत्व किया कि निर्णय और डिक्री धोखाधड़ी और गलत प्रतिनिधित्व द्वारा प्राप्त की गई थी, जो कि उनके द्वारा निष्पादन न्यायालय के समक्ष साक्ष्य का नेतृत्व नहीं किया गया था जब वे आपत्तियाँ प्रस्तुत कीं और तर्क दिया कि डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी। कि, इसके बाद, विद्वान प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश ने रिपोर्ट प्रस्तुत की कि डिक्री धोखाधड़ी से और के आधार पर प्राप्त की गई थी विद्वान प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट मुख्य रूप से, उच्च न्यायालय ने विवादित निर्णय द्वारा निर्णय और डिक्री को दरकिनार कर दिया है और आदेश दें। इस प्रकार, उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि उचित स्तर पर उचित कार्यवाही शुरू नहीं करने में निर्णय देनदारों की ओर से पूरी तरह से देरी और लापरवाही की गई थी। निर्णय देनदारियों द्वारा प्रस्तुत आपत्तियों को इस प्रभाव से खारिज करते हुए कि निर्णय

धोखाधड़ी से प्राप्त किया गया था और गलत प्रतिनिधित्व को निर्णय देनदारों द्वारा तब तक चुनौती नहीं दी गई थी जब तक कि गिरवी रखी गई संपत्ति की नीलामी नहीं की गई थी; गिरवी रखी गई संपत्ति की बिक्री की नीलामी खरीदार के पक्ष में पुष्टि की गई थी और यहां तक कि नीलामी खरीदार के पक्ष में बिक्री प्रमाण पत्र भी जारी किया गया था और बिक्री उप–पंजीयक के पास पंजीकृत की गई थी और यहां तक कि 1999 की आई. ए. संख्या 3 और आई. ए. संख्या 4 को भी खारिज कर दिया गया था। इतना ही नहीं, तब तक कोई अपील भी नहीं की गई थी। उच्च मंच के समक्ष हमला/चुनौती दी गई। पहली अपील वर्ष 2000 में दायर की गई थी और उस समय तक गिरवी रखी गई संपत्ति पहले से ही थी। निष्पादन कार्यवाही में बेचा गया और नीलामी खरीदार के पक्ष में बिक्री की पुष्टि की गई और यहां तक कि नीलामी खरीदार के पक्ष में बिक्री प्रमाण पत्र भी जारी किया गया।

9. इस स्तर पर, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रासंगिक प्रावधानों के अनुसार, विशेष रूप से, आदेश XXI आदेश XXI नियम 94 के साथ पढ़ा जाने वाला नियम 92, एक बार बिक्री की पुष्टि हो जाने और खरीदार के पक्ष में बिक्री प्रमाण पत्र जारी हो जाने के बाद, वही अंतिम हो जाएगा। डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी या नहीं, शुरुआत में, यह ध्यान रखना आवश्यक है कि जिस समय उच्च न्यायालय ने ऐसा आदेश पारित किया था, उस समय पहले से ही विद्वान निष्पादन न्यायालय द्वारा दिनांक 03.03.1998 द्वारा पारित एक आदेश था जिसमें निर्णय देनदारों द्वारा उठाई गई आपत्तियों को खारिज कर दिया गया था कि डिक्री धोखाधड़ी और गलत प्रतिनिधित्व द्वारा प्राप्त की गई थी। जैसा कि विद्वत निष्पादन न्यायालय द्वारा दिनांकित 03.03.1998 के आदेश में कहा गया है, निर्णय देनदार इस कथन को छोड़कर कि डिक्री धोखाधड़ी, गलत प्रतिनिधित्व द्वारा प्राप्त की गई थी, और न ही आगे उस पर प्रस्तुतियाँ की गईं और न ही निर्णय देनदारों ने भी इसके समर्थन में कोई सबूत दिया। इसलिए, इस प्रकार, विद्वत निष्पादन न्यायालय इस आपत्ति को खारिज करने में उचित था कि डिक्री थी धोखाधड़ी, गलत प्रतिनिधित्व आदि द्वारा प्राप्त। कानून के तय किए गए सिद्धांत के अनुसार, जब धोखाधड़ी का आरोप लगाया जाता है तो उसे प्रमुख साक्ष्य द्वारा प्रस्तुत और स्थापित करने की आवश्यकता होती है। केवल यह आरोप लगाना कि धोखाधड़ी हुई, पर्याप्त नहीं है। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा इस प्रश्न पर कि क्या डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी या नहीं, विद्वान प्रधान शहर सिविल न्यायाधीश से रिपोर्ट मांगने के लिए पारित बाद के आदेश को निर्णय देनदारों को कमी को भरने का अवसर देना कहा जा सकता है। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा विद्वान प्रधान नगर सिविल न्यायाधीश से रिपोर्ट मांगने के लिए अपनाए गए पाठ्यक्रम को मंजूरी नहीं दी जा सकती है।

10.1 अन्यथा भी, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि आदेश एक्स. एल. आई. के प्रावधानों के अनुसार, अपीलीय न्यायालय अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति दे सकता है, चाहे वह मौखिक हो या दस्तावेजी, यदि आदेश एक्स. एल. आई. नियम 27 में उल्लिखित शर्तें अतिरिक्त साक्ष्य के बाद संतुष्ट होती हैं। आदेश एक्स. एल. आई. नियम 27 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए पेश करने की अनुमति। इसके बाद, आदेश एक्स. एल. आई. नियम 28 और 29 के तहत प्रक्रिया का पालन करना आवश्यक है। इसलिए, जब तक और जब तक आदेश एक्स. एल. आई. नियम 27,28 और 29 के तहत प्रक्रिया का पालन नहीं किया जाता है, तब तक अपील के पक्षों को अतिरिक्त साक्ष्य देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और/या अपीलीय अदालत को उस अदालत को निर्देश देना उचित नहीं है, जिसके डिक्री से अपील को प्राथमिकता दी जाती है या किसी अन्य अधीनस्थ

अदालत को ऐसा साक्ष्य लेने और अपीलीय अदालत में ले जाने पर इसे भेजने का निर्देश देना उचित नहीं है। अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री से यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने शहर के प्रधान सिविल न्यायाधीश से रिपोर्ट मांगते समय उक्त प्रक्रिया का पालन नहीं किया है।

10.2 अन्यथा भी, यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि उस समय जब विद्वान प्रधान नगर सिविल न्यायाधीश ने पक्षों को एच. एस. गौतम बनाम का नेतृत्व करने की अनुमति दी थी। साक्ष्य और प्रस्तुत रिपोर्ट/निष्कर्ष कि डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी, निष्पादन न्यायालय द्वारा पहले से ही एक आदेश पारित किया जा चुका था समन्वित न्यायालय ने निर्णय देनदारों द्वारा की गई आपत्तियों को खारिज कर दिया कि डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी। इसलिए, जब तक और जब तक 03.03.1998 दिनांकित आदेश को दरकिनार नहीं किया जाता, तब तक न तो उच्च न्यायालय को विद्वान प्रधान नगर सिविल न्यायाधीश से रिपोर्ट मांगने में उचित ठहराया गया था और न ही विद्वान प्रधान नगर सिविल न्यायाधीश को भी निर्णय देनदारों को इस आरोप पर साक्ष्य देने की अनुमति देने में उचित ठहराया गया था कि डिक्री धोखाधड़ी, गलत प्रतिनिधित्व द्वारा प्राप्त की गई थी, जब निर्णय देनदार निष्पादन न्यायालय के समक्ष पहले कोई सबूत देने में विफल रहे थे जब ऐसी आपत्तियां उठाई गई थीं।

11. उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित निर्णय और आदेश से, ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने विद्वान प्रधान नगर सिविल न्यायाधीश द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर बहुत अधिक भरोसा किया है और उसके बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि डिक्री धोखाधड़ी, गलत प्रतिनिधित्व द्वारा प्राप्त की गई थी। इसलिए, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में और ऊपर बताए गए कारणों से, उच्च न्यायालय ने विद्वान प्रधान नगर सिविल न्यायाधीश द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर भरोसा करने में त्रुटि की है, जिसमें कहा गया है कि डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी।

11.1 अन्यथा भी, विद्वान प्रधान नगर सिविल न्यायाधीश के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य और यहां तक कि द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों के अवलोकन पर प्रधान नगर सिविल न्यायाधीश और उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए दिया गया तर्क कि डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी, हमारी राय है कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, और यहां तक कि साक्ष्य के आधार पर भी, उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने में गलती की है कि डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी। निर्णय देनदार–मूल प्रतिवादियों ने लिखित बयान या सहमति की शर्तों पर अपने हस्ताक्षर किए हैं। गिरवी रखी गई संपत्ति और वचन पत्र विवाद में नहीं हैं। इसलिए, जब मुकदमा दायर किया गया था और निर्णय देनदार राशि चुकाने के लिए और समय प्राप्त करना चाहते थे और जब तीन साल के भीतर 5,000/– रुपये की मासिक किस्त में रुपये का भुगतान करने पर सहमति हुई, तो कुछ भी अप्राकृतिक नहीं था।

12. अब, जहाँ तक अपीलार्थी की ओर से आपत्ति उठाई गई है कि सहमति आदेश के खिलाफ उच्च न्यायालय के समक्ष अपील रखरखाव योग्य नहीं था, इसका कोई सार नहीं है। उच्च न्यायालय ने इस पर विस्तार से विचार किया है और सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रासंगिक प्रावधानों पर विचार किया गया, अर्थात् धारा 96, आदेश XXIII नियम 3, आदेश XLIII नियम 1 (एम) और आदेश हालाँकि, यह भी सच है कि आदेश XXIII नियम 3A के अनुसार कोई भी मुकदमा इस आधार पर डिक्री को दरकिनार करने के लिए नहीं होगा कि जिस समझौते पर डिक्री आधारित है वह वैध नहीं था। हालाँकि, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि जब 1976 के अधिनियम 104 द्वारा आदेश XLIII

नियम 1 (एम) को हटा दिया गया था, तो साथ ही, नियम XLIII नियम 1ए को 1976 के अधिनियम 104 द्वारा जोड़ा गया था, जिसमें प्रावधान है कि समझौता दर्ज करने या समझौता दर्ज करने से इनकार करने के लिए एक मुकदमे में पारित डिक्री के खिलाफ अपील में, अपीलार्थी के लिए इस आधार पर डिक्री को चुनौती देने के लिए खुला होगा कि समझौता दर्ज किया जाना चाहिए था या नहीं किया जाना चाहिए था। इसलिए, उच्च न्यायालय ने बनवारी लाल बनाम में इस न्यायालय के निर्णय पर सही भरोसा किया है। चंदो देवी ए. आई. आर. 1993 एस. सी. 1139 (पैरा 9) और सही आया है यह निष्कर्ष कि 1995 के ओ. एस. सं. 3376 में पारित निर्णय और डिक्री के खिलाफ उच्च न्यायालय के समक्ष अपील कायम रखने योग्य थी। उच्च न्यायालय द्वारा ऐसा ठहराने में कोई त्रुटि नहीं की गई है।

13. अब, जहाँ तक 1996 की निष्पादन याचिका संख्या 232 में विद्वत निष्पादन न्यायालय द्वारा 1999 के आई. ए. संख्या 4 को खारिज करने का संबंध है, जिसे निर्णय देनदारों द्वारा विषय बन्धक संपत्ति के संबंध में दिनांकित आई. डी. 1 और आई. डी. 2 की अदालती नीलामी/बिक्री को दरकिनार करने के लिए दायर किया गया था, यह विवाद में नहीं है कि निर्णय देनदार ऐसे लोगों ने आदेश XXI नियम 90 सी. पी. सी. के संदर्भ में ब्याज के साथ रु. 4,50,000/– यानी बिक्री पर विचार की राशि जमा नहीं की। जहां किसी डिक्री के निष्पादन में किसी अचल संपत्ति को बेचा गया है, वहां डिक्री धारक, या खरीदार, या परिसंपत्तियों के दर योग्य वितरण में हिस्सेदारी का हकदार कोई अन्य व्यक्ति, या जिसके हित बिक्री से प्रभावित होते हैं, उसे प्रकाशित करने या संचालित करने में भौतिक अनियमितता या धोखाधड़ी के आधार पर बिक्री को रद्द करने के लिए अदालत में आवेदन कर सकता है। इसलिए, आदेश XXI नियम 90 के अनुसार, अनियमितता या धोखाधड़ी के आधार पर बिक्री को अलग करने के लिए डिक्री धारक द्वारा इसे प्रकाशित करने या संचालित करने में भौतिक अनियमितता या धोखाधड़ी के आधार पर आवेदन किया जा सकता है। यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि वर्तमान मामले में, यह निर्णय देनदारों का मामला नहीं है कि बिक्री के प्रकाशन या संचालन में कोई भौतिक अनियमितता या धोखाधड़ी हुई थी। ऐसी कोई प्रस्तुति नहीं दी गई है। इस न्यायालय के समक्ष। उनकी आपत्ति यह है कि डिक्री धोखाधड़ी से प्राप्त की गई थी। इसलिए भी, 1999 के आदेश XXI नियम 90 यानी आई. ए. संख्या 4 के तहत मूल निर्णय देनदारों द्वारा प्रस्तुत आवेदन आवश्यक था। खारिज किया जाना और विद्वान निष्पादन न्यायालय द्वारा सही ढंग से खारिज किया जाना।

14. अब, जहाँ तक 2000 के सी. आर. पी. सं. 3297 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित निर्णय और आदेश का संबंध है, निष्पादन न्यायालय द्वारा दिनांकित 03.03.1998 द्वारा पारित आदेश, उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित निर्णय और आदेश से संबंधित है, यह बेची गई संपत्ति और उस व्यक्ति का नाम जिसे बिक्री के समय खरीदार घोषित किया जाता है। इस तरह के प्रमाण पत्र पर वह तारीख होगी जिस दिन बिक्री पूर्ण हो गई थी। इसलिए, जब निर्णय देनदारों द्वारा उठाई गई आपत्तियों को खारिज करने वाले दिनांक 1 के आदेश के बाद और उसके बाद 1999 के आई. ए. संख्या 4 में आदेश पारित किया गया और उसके बाद जब बिक्री की पुष्टि की गई और बिक्री प्रमाण पत्र जारी किया गया, तो उच्च न्यायालय को इसके बाद निर्णय देनदारों द्वारा उठाई गई आपत्तियों को खारिज करने वाले 1 के आदेश को रद्द नहीं करना चाहिए था, जिसे वर्ष 2000 तक निर्णय देनदारों द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती नहीं दी गई थी। इन परिस्थितियों में, 2000 के सी. आर. पी.

संख्या 3297 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित निर्णय और आदेश को रद्द करने और दिनांकित 03.03.1998 के आदेश को दरकिनार करने को कायम नहीं रखा जा सकता है और इसे रद्द करने और दरकिनार करने का अधिकार है।

15. अब, जहाँ तक 2000 के एम. एफ. ए. सं. 3934 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित निर्णय और आदेश का संबंध है, [2021] 4 एस. सी. आर. को रद्द कर दिया गया है। 1999 के आई. ए. सं. 4 को खारिज करने वाले दिनांकित आदेश, जो आदेश XXI नियम 90 के तहत निर्णय देनदारों द्वारा दायर किया गया था, का संबंध है, उच्च न्यायालय ने इसे यह कहते हुए दरकिनार कर दिया है कि नीलामी खरीदार को प्रामाणिक खरीदार नहीं कहा जा सकता है क्योंकि वह निर्णय लेनदार से संबंर्धित था और वह उस फम का भागीदार था जिसके पक्ष में बंधक निष्पादित किया गया था। तथापि, यह ध्यान रखना आवश्यक है कि 1999 का आई. ए. सं. 4 उपरोक्त आधारों पर बिक्री को अलग रखने के लिए दायर नहीं किया गया था। उक्त आवेदन इस आधार पर प्रस्तुत किया गया था कि पर्याप्त बाजार मूल्य प्राप्त करने के लिए कोई उचित प्रकाशन नहीं किया गया था। इसलिए, उच्च न्यायालय 1999 के आई. ए. सं. 4 में निर्णय देनदारों के मामले से आगे निकल गया है। गुण–दोष पर भी और तथ्यात्मक रूप से भी, उच्च न्यायालय यह टिप्पणी करने में सही नहीं है कि नीलामी खरीदार प्रामाणिक नहीं था खरीदार। निर्णय लेनदार के अनुसार, साझेदारी फर्म पहले से ही बहुत पहले भंग हो चुकी थी और उसके बाद वादी को विरासत में मिली फर्म की परिसंपत्तियाँ, दावे और देनदारियाँ। जैसा कि 1999 के आई. ए. सं. 4 में आदेश पारित करते समय विद्वत निष्पादन न्यायालय द्वारा देखा गया था, निर्णय देनदारों ने पूरी राशि भी जमा नहीं की थी। इन परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय ने रद्द करने और स्थापित करने में त्रुटि की।

16. उपरोक्त और ऊपर बताए गए कारणों को देखते हुए, ये दोनों अपीलें सफल होती हैं। विवादित सामान्य निर्णय और आदेश उच्च न्यायालय द्वारा 2001 के आर. एफ. ए. सं. 274,2000 के एम. एफ. ए. सं. 3934 और 2000 के सी. आर. पी. सं. 3297 में पारित किए जाने को इसके द्वारा रद्द कर दिया जाता है। हालांकि, लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

अपील की अनुमति दी गई।